यज्ञके वस्त्र

(लेखक— श्री पं. वीरसेनजी वेदश्रमी, वेदविज्ञानाचार्य)

卐

यज्ञमें रेशमी वस्त्र पहनें

यज्ञ-कार्यमें विशेष प्रकारके वस्त्रोंका विशिष्ट प्रकारसे ही परिधान अर्थात् उनको धारण करना होता है। महर्षि स्वामी दयानन्दजीने संस्कारविधिमें जो प्रमाण वस्त्रके लिये उद्धृत किया है, वह निम्न प्रकार है—

'पत्नीयजमानपरिधानार्थं क्षौमवासश्चतुष्टयम्'।

अर्थात् यजमान पत्नी और यजमानके लिये ४ रेशमीवस्त्र होने चाहिये। दो-दो वस्त्र दोनोंके लिये होते हैं जिनमें एक-एक वस्त्र अधोवस्त्र और दूसरा उपवस्त्र होता है। अधोवस्त्रको कटिके नीचे पहना जाता है वह धोती कहाती है और उपवस्त्र जिसको ऊपर शरीर पर दुपट्टा या चादरके रूपमें धारण करते हैं वह होता है।

खण्डित, फाडा या फटा हुआ वस्त्र न पहनें

पुनः ये वस्त्र कैसे हों, इसके लिये कात्यायन श्रौत सूत्र ४।७।१२ में लिखा है—

क्षौमे वस्त्रे ईषद् धोते

अर्थात् यज्ञके लिये जो दो वस्त्र धारण किये जावें वे रेशम के होने चाहिये। वे फटे हुए या फाडकर बनाये गये या काट कर सीकर बनाये न हों और वे धुले होने चाहिये। तैत्तिरीय ब्राह्मण (३८।१) में भी लिखा है—

अहतं वासः परिधत्ते

अर्थात् अखंडित वस्त्र धारण करे। फाडा हुआ या फटा हुआ न हो। अहतका तात्पर्य बिना फटा हुआ अखंडित सम्पूर्ण वस्त्र है। जैसे कि चादर, धोती आदि जो बनकर अपनी सम्पूर्णताके द्योतक हैं। वे भी नवीन ही हों। गोभिल गृह्य सूत्रमें "अहतेन वसनेन" का अर्थ-अखंडित वसनेन ही श्री पं० सत्यव्रत सामश्रमीने किया है। किसीके द्वारा पहने हुए भी न हों। किसी थान या बडे वस्त्रके खण्ड करके जो वस्त्र बनाये जाते हैं चाहे वे धोती एवं चादरके समान ही लम्बे, चौडे क्यों न हों परन्तु वे खण्ड भावको प्राप्त हो जाते हैं। अतः किसी भी प्रकारसे खण्डभावको प्राप्त हुए वस्त्र यज्ञमें उपयोगमें नहीं लेना चाहिए। अखंडित अर्थात् सम्पूर्ण-भाव, देवत्वका बोधक है और खण्ड-भाव, असुरभावका द्योतक है। यज्ञमें असुरभावका त्याग ही किया जाता है। जैसा कि "प्रत्युष्टं रक्षः" (यजु: १।७) मन्त्र में असुरभावको नष्ट करनेका संकेत है तभी – उर्वन्तरिक्षमन्वेमि (यजु. १।७।१) अर्थात् उन्नतिके विस्तृत अवकाशको यज्ञ द्वारा प्राप्त होता है।

पहना हुआ वस्त्र न पहने

अहत वस्त्रका यह भी अभिप्राय है कि धोनेके पश्चात् भी किसी प्रकारसे धारण न करके उसको अविकृत या सल रहित रखा गया हो। जैसा कि निम्न श्लोकसे ज्ञात होता है—

ईषद्धौतं नवं श्वेतं सदशं यन्न धारितम्।
अहतं तद्विजानीयात्सर्वकर्मसु पावनम्॥

अर्थात् जो नया श्वेत वस्त्र कुछ धोया जाकर उसके दोनों लम्बाईके प्रान्तोंसे धारण न किया गया हो अर्थात् कटि पर धोती रूपसे धारण न किया गया हो वह अहत वस्त्र सब पवित्र कार्योंमें उपयोगी होता है।

सिले हुए वस्त्र न पहनें

खंडित वस्त्रोंको सीकरके भी वस्त्र बनाये जाते हैं और उनसे विविध फेशनके सुन्दर वस्त्र बनते ही हैं। परन्तु यज्ञमें स प्रकारके सिले हुए वस्त्र अहत रूपसे मान्य नहीं हैं। वे

हत वस्त्र ही हैं अतः यज्ञके लिये ग्राह्य नहीं है जैसा कि कहा है—

न कुर्यात् संधितं वस्त्रं देवकर्माणि भूमिप।
न दग्धं न च वै छिन्नं पारक्यं न तु धारयेत्॥

देवकर्म अर्थात् सन्ध्याग्निहोत्र यज्ञादि कार्योंमें सन्धिवाले वस्त्र अर्थात् सिले हुए वस्त्रोंका प्रयोग न करे। जले हुए वस्त्र, अलग किये हुए, फाडे हुए वस्त्र भी धारण न करें। दूसरोंके वस्त्र भी धारण करें। अर्थात् यज्ञ कार्यमें नवीन शुद्ध अखंडित वस्त्र ही धारण करें। इसी प्रकारके भावको अन्यत्र भी निम्न प्रकार प्रकट किया गया है—

सूचिविद्धेन वस्त्रेण आखुदष्टेन वा द्विजः।
कटिशून्येन देवेशि, सर्वस्नानफलं हरेत्॥

अर्थात् सुईसे सिले वस्त्र, चूहे कीडे आदिके द्वारा कटे हुए वस्त्र धारण करके धार्मिक स्नानादि कार्य जो करता है और जो नग्न होकर स्नानादि कर्म करता है उसके स्नानका सब फल नष्ट हो जाता है।

यह वर्णनेका प्रयोजन यही है कि यज्ञमें बिना सिले, सम्पूर्ण, अखंडित वस्त्र ही धारण करने चाहिये। सिले हुए वस्त्र जैसे कुरता, कमीज, पाजामा, पेंट, कोट आदिको यज्ञमें धारण न करे और न वस्त्रोंके टुकडोंको ही धारण करे जैसा कि लोग यज्ञोंमें गलेमें छोटासा टुकडा डाल लेते हैं। खंडित एवं सिले वस्त्रोंके धारण करनेसे अपने मन पर तथा आचार-विहार पर भी प्रभाव पडता है और वह प्रभाव धार्मिक भावनाओंके विपरीत पडता है अतः इनका यज्ञोंमें पहननेका निषेध है।

सिले हुए वस्त्रोंका धर्म–कार्यों पर कुप्रभाव

सिले वस्त्रोंका अपने धर्म कर्म एवं शुभ विचारों पर विपरीत प्रभाव पडता है ऐसा महर्षि स्वामी दयानन्दजी मानते एवं अनुभव करते हुए जोधपुर नरेशको पत्रमें लिखते "— जैसे मुसलमान और ईसाई आदिके टोपी पैजामा मुंडे जूते, कोटपतलून, टोपी आदि धारणसे आप अपने उत्तम विचारोंसे पृथक् रहे हैं" ये शब्द अत्यन्त मनन योग्य है और विचार करना चाहिये कि महर्षि दयानन्द इस प्रकारके सिले हुए वस्त्रोंके कदापि पक्षमें नहीं थे। अतः क्या हमें यज्ञोंमें ऐसे वस्त्र धारण करने योग्य है ? इससे स्पष्ट है कि यज्ञमें सिले हुए वस्त्र जैसे पाजामा, कोट, पतलून, कमीज आदि नहीं धारण करने चाहिये। यज्ञके लिये सम्पूर्ण वस्त्र अर्थात् बिना सिला हुआ वस्त्र ही धारण कर यज्ञ कार्य करना चाहिए। यज्ञमें सम्मिलित होनेवाले व्यक्ति भी तंग वस्त्र, मोजे, चूडीदार पाजामा आदि नहीं पहनें और न नैनोल टेरीलीन आदिके वस्त्र या फटे, कटे, जले और मैले वस्त्र ही धारण करें।

बिना सिले अखंडित वस्त्रोंका लाभ

यज्ञमें यदि सम्पूर्ण वस्त्र अखंडित बिना सिला हुआ वस्त्र पहनकर भाग लेंगे तो शरीर ऐसा अच्छादित नहीं हो सकेगा जैसे कि शरीर पर पटी सी बांध दी हो। उसमें पर्याप्त अवकाश रहेगा जिससे कि यज्ञकी वायुका वस्त्रके भीतर प्रवेश एवं निवास भी हो सके। यज्ञके द्वारा जो आरोग्य-प्रद वायु एवं धूम्र उत्पन्न होगा उसका यज्ञकर्ताके वस्त्रोंके मध्यसे शरीरके प्रचुर भागसे संपर्क हो सकेगा जिससे उसको विशेष लाभ होगा। यह लाभ तंग वस्त्र पहनने वालोंको नहीं हो सकता।

टेरीलीन आदि यज्ञमें न पहनें

टेरीलीन, आदिके वस्त्र तापको सहन नहीं कर सकते और अग्निको तो बिल्कुल भी सहन नहीं कर सकते। अतः यज्ञाग्निके पास ऐसे वस्त्रोंको पहनकर कदापि नहीं बैठना चाहिये। इसके अतिरिक्त नैनोल सदृश वस्त्रोंमें वायुके अवरोधनकी शक्ति होती है। छिद्रोंके अभावके कारण उन में यज्ञका वायु प्रवेश न होनेसे शरीरको यज्ञकी आरोग्यप्रद वायुका स्पर्शका लाभ प्राप्त होनेसे वंचित रहना पडता है।

रेशमी वस्त्रोंकी यज्ञके लिये उपयोगिता

सूती वस्त्र भी अग्निको ग्रहण करने वाले हैं। यज्ञ करते समय यदि किसी भी असावधानीसे वस्त्रमें अग्नि लग जावे तो वह ईन्धनके रूपमें प्रज्वलित होने लगता है। इससे भी यज्ञकार्यमें हानि होती है। शुद्ध रेशमी वस्त्र तथा ऊनी वस्त्रोंको अग्नि लगनेका भय नहीं रहता है। यदि कोई पतंगा आदि ऐसे वस्त्रों पर पड जावे तो वह उतने ही स्थानको जला सकेगा परन्तु स्वयं वह वस्त्र अग्निमय होकर शेष वस्त्रको नहीं जला सकता है। अतः यज्ञके

लिये रेशमी वस्त्रोंका जो विधान प्राचीन ऋषि-मुनियोंने लिखा है और जिसको महर्षिने भी प्रमाण रूपमें उपस्थित किया है वह अवश्य मान्य करना चाहिये और इसमें किसी प्रकारका बहाना नहीं ढूंढना चाहिये। नकली रेशमका भी व्यवहार यज्ञमें नहीं करना चाहिये। उपासनाके संबंधमें रेशमके वस्त्रकी उपयोगिता और भी है जिसका अभी यहां उल्लेख नहीं कर रहे हैं।

किन वस्त्रोंको धारण करें

यज्ञके जो अधोवस्त्र और उपवस्त्र कहे हैं उनको कैसे धारण करें यह भी प्रश्न उपस्थित होता है। सर्व प्रथम यही सोचना चाहिये कि अधोवस्त्र किसे कहते हैं? कोई कह सकते हैं कि जो कमरके नीचे पहना जाय चाहे वह नेकर, पाजामा, पतलून, तहमत, लूंगी आदि कुछ भी हो, वे सब अधोवस्त्र ही हैं। परन्तु महर्षि स्वामी दयानन्दजी अधो-वस्त्रका अर्थ संस्कारविधिके समावर्त्तन प्रकरणमें -अधोवस्त्र अर्थात् धोती वा पीताम्बर धारण यह कहते हैं। -पीताम्बर नामसे यज्ञादि कार्यके लिये एक विशेष प्रकारकी रेशमी रंगीन व सफेद धोतियां आती हैं। उससे ही तात्पर्य यहां है। अर्थात् यज्ञादि कार्यके लिये विशेष बनी हुई धोतियां जिन्हें पीताम्बरी कहते हैं, वह होनी चाहिये अथवा उसके अभावमें सूती धोती हों। इन्हींकी अधोवस्त्र संज्ञा है। इन्हें ही धारण करके यज्ञ करना चाहिये।

उपवस्त्रसे तात्पर्य ऊपर धारण करने वाले वस्त्रसे है। संभव है कि ऊपर धारण करनेवाले वस्त्रसे कोई कमीज, कोट, बुशशर्ट आदि ग्रहण कर लें परन्तु महर्षि स्वामी दयानन्दजी संस्कारविधिमें जातकर्म संस्कारमें उपवस्त्र ओढके इन शब्दोंका प्रयोग करते हैं, जिससे स्पष्ट है कि उपवस्त्र ओढा जाता है। ओढा जानेवाला उपवस्त्र चादर, शाल, दुशाला आदि होते हैं और वे इतने छोटे भी नहीं होते है कि वे केवल गलेमें लटका लिये जावे जो तौलिया या अंगोछेके तुल्य लम्बे हों।

एक ही वस्त्र पहनकर कर्म न करें

दो वस्त्रोंका विधान बताता है कि नीचेका वस्त्र ऊपर न ओढा जावे। ओढनेका वस्त्र पृथक् ही रहेगा। अतः एक वस्त्रको पहन एवं उसीको ओढकर भी यज्ञ न करे। इसी लिए गोभिलाचार्यने लिखा—

+

नान्तरीयकस्यैकदेशस्य कल्पयित्वोत्तरीयताम्।

अर्थात् एक ही वस्त्रको पहनकर उसीके एक अंशको ओढकर भी क्रिया न करे। इसीको निम्न श्लोकमें भी कहा है।

होमदेवार्चनाद्यासु क्रियासु पठने तथा
नैकवस्त्रः प्रवर्तेत द्विजो नाचमने जपे॥

यज्ञ होमादि देवार्चन क्रियाओंमें अध्ययनादि कार्यमें, जप एवं आचमनादि कार्योंको एक वस्त्रकोही पहनकर या उसीको ऊपर भी धारण करके नहीं करना चाहिये। अतः २ वस्त्र यज्ञोंमें होने ही चाहिये।

धोतीको कैसे धारण करें

अधोवस्त्र अर्थात् पीताम्बरी या धोतीको कैसे पहना जावे? क्या तहमत या लूंगी बांध ले जैसा कि संन्यासी पहनते हैं अथवा मुसलमान नमाजके समय पहनते हैं? या एक लांगकी धोती पहनें या दो लांगकी बांधें? इस सबके समाधानके लिये शास्त्रकारोंने यह व्यवस्था रखी है:—

वस्त्रमूलं समुद्धृत्य पृष्ठवंशे षडंगुलम्।
दशायां त्र्यंगुलं त्यक्त्वा नाभिभागे विनिर्दिशेत्।
दशाहीनं न कर्तव्यं परिवर्तनं कारयेत्॥

अर्थात् धोतीका एक सिरा पीछे कमरमें छः अंगुल खोंसे और सामनेका दूसरा सिरा तीन अंगुल नाभिमें इस प्रकार सामने लगावे कि आगे पीछेके दोनों सिरे जो वस्त्रकी लम्बाई की समाप्तिके सूचक है वे दीखे नहीं। दोनों सिरोंको सीकरके सिराहीन भी न करे, न लपेटे ही।

सिले वस्त्र आसुरी सभ्यताके जनक हैं

फटा, फटा, असम्पूर्ण, खंडित एवं सिलावस्त्र असुरविद्ध है। वस्त्रोंको काट कर ही नाना प्रकारके फैशन, राग-रंगकी वृद्धिसे आसुर भाव एवं आसुरी सभ्यताकी वृद्धि होती है जिनसे राजसिक एवं तामसिक भावनाओंका उदय तथा सात्विक भावनाओंका लोप होता है। ये ही रागजन्य प्रवृत्तियां शारीरिक एवं मानसिक रोगोंकी जनक है और जन-समाजको भी दूषित एवं प्रभावित करती हैं। यज्ञमें ये भाव त्याज्य ही हैं।

यज्ञमें अतिश्रेष्ठ वस्त्र धारण करे

वस्त्रोंके बारेमें महर्षि दयानन्दजीने पूर्वाचार्योंका प्रमाण

देकर रेशमी वस्त्रोंका यज्ञमें विधान प्रदर्शित किया है। महर्षिने यजुर्वेद भाष्यमें अ. १९ के ८९ वें मन्त्रमें भी रेशमी व ऊनी वस्त्र शाल आदिका विधान किया है। उत्तमसे उत्तम वस्त्रोंमें रेशमी और शालोंकी गणना होती है। अतः यज्ञ में इन्हींका उपयोग करना चाहिये। ईश्वरस्तुति प्रार्थनो-पासनाके मन्त्रोंके भाष्यमें महर्षि स्वामी दयानन्दजी संस्कार विधिमें लिखते हैं "परमात्माकी उपासना अपनी सकल उत्तम सामग्रीको उसको आज्ञापालनमें समर्पित करके भक्ति विशेष करें" "परब्रह्मकी प्राप्तिके लिये सब सामर्थ्यसे विशेष भक्ति करें" इन वाक्योंमें भी उपासनाके लिये अपनी सकल उत्तम सामग्री और सब सामर्थ्यका उल्लेख प्रकट करता है कि यज्ञमें हमें सभी वस्त्र, पात्र, सामग्री आदि उत्तमोत्तम ही ग्रहण करनी चाहिये–सामान्य नहीं–अथवा अपने सामर्थ्यसे हीन कोटिके भी नहीं रखने चाहिये।

संस्कारविधिमें विविध संस्कारोंके अवसर पर भी जो वस्त्र धारण करनेका लिखा है उनसे भी अतिश्रेष्ठ, उत्तम वस्त्र ही यज्ञमें धारण करना चाहिये यह ज्ञात होता है। जैसा कि—

(१) "शुद्धवस्त्र" – (नामकरण, वेदारंभ एवं विवाह संस्कारमें)
(२) "उत्तमवस्त्र" – (चूडा कर्म एवं उपनयन संस्कारमें)
(३) अतिश्रेष्ठ वस्त्र धारण – (समावर्तन संस्कारमें)
(४) "सुन्दर वस्त्र" – (निष्क्रमण संस्कारमें)

त्याज्यवस्त्र

यज्ञोंमें कैसे वस्त्र नहीं होना चाहिये इस बारेमें यद्यपि ऊपरके विवेचनसे बहुत कुछ प्रकट हो जाता है तथापि इस विषयमें और भी कुछ ज्ञातव्य विशेष है ही। निम्न प्रकारके वस्त्र धर्मकार्योंमें वर्जित हैं :—

कटिवस्त्रं धृतं तु यद्वस्त्रं पुरीषा यत्र वा कृतः।
मूत्रमैथुनकृद्वस्त्रं धर्मकार्ये विवर्जयेत् ॥

अर्थात् जिस वस्त्रको एक बार अधोवस्त्रके रूपमें धारण किया हो उसको धोकर ही पुनः पहनना चाहिये। जिस वस्त्रको पहन कर मलमूत्रका विसर्जन किया हो उस वस्त्रको भी नहीं धारण करना चाहिये-धोनेके बाद ही उपयोगमें लिया जा सकता है। इसी प्रकार जिस वस्त्रको धारण करके मैथुन कर्म किया हो उसका धर्मकार्यमें उपयोग नहीं लेना चाहिये।

आज सार्वजनिक यज्ञोंमें उपवस्त्रके रूपमें गलेमें एक पीलीसी चिन्दी स्कार्फ, पट्टी या टाईसदृश वस्त्र खण्ड यज्ञके अवसर पर आहुति–दाताओंके गलेमें डाल देते हैं और फिर उसीको उतारकर दूसरेके गलेमें भी डाल देते हैं, पुनः उनसे भी उतारकर औरोंको क्रमशः पहना देते हैं। यह प्रथा ठीक नहीं है। क्या इसी प्रकार यज्ञोपवीत भी एकका दूसरेको पहनाया जा सकता है? शास्त्रकारोंने तो– "वस्त्रमन्यधृतं चैव सर्वदा परिवर्जयेत्" – अर्थात् दूसरेका धारण किया हुआ वस्त्र यज्ञमें कभी भी धारण नहीं करे यह आदेश दिया है। अतः यह प्रथा समाप्त करनी चाहिये तथा यज्ञके लिये उपवस्त्र जो कि पूर्ण चादर या शालके तुल्य हो, उसे ही धारण करना चाहिये। वह नवीन वस्त्र हो या अपने ही उपयोगमें पूर्व लिया हुआ हो।

वस्त्रोंके रंगका शरीर पर प्रभाव

रंगोंका प्रभाव अपने शरीर पर होता है। अतः यज्ञमें जिन वस्त्रोंको धारण किया जाता है उनका भी हमारे शरीर पर प्रभाव पडता है। यज्ञमें ध्यान, शान्ति, सबके कल्याण आदिकी कामना, सात्त्विक भावोंका उदय इत्यादिकी प्रधानता प्रायः रहती है और दैनिक यज्ञादिकर्मोंमें भी एक ही प्रकार की भावना रहती है। अतः दैनिक सन्ध्योपासन यज्ञादि अनु-ष्ठान जपादिमें इन्हीं भावनानुकूल वस्त्रोंको धारण करना चाहिये। इन पूर्वोक्त भावनाके अनुकूल श्वेतवर्णके वस्त्र हैं जो शुद्धता, शान्ति, सात्त्विकता, ध्यान एवं सर्व मांगल्यकी भावना के उद्बोधक हैं। वर्णसे अपने अन्दर भी वर्णकी उत्पत्ति होती है। पीत रंग और केसरिया रंग भी उपयोगी हैं। उनसे सत्व एवं रज मिश्रित प्रभाव उत्पन्न होता है। परन्तु जिनसे रज तम मिश्रित या केवल तमोभाव उत्पन्न होते है ऐसे रंगके वस्त्रोंको पहनकर उपासना करना निषिद्ध है। जैसा कि कहा है—

न रक्तं मलिनं चैव न नीलं च प्रशस्यते।

अर्थात् लाल, नीला और मैला वस्त्र या मैलखोर वस्त्र यज्ञमें निषिद्ध माने जाते हैं। ऐसे वस्त्रोंको पहनकर शुभ दैनिक धर्म कार्य करनेसे मनपर प्रभाव अनुकूल नहीं पडता है

और मलिन, तामसिक भावोंका उदय होता है अतः साधना विफल होती है जैसा कि कहा है—

नीली रक्तेन वस्त्रेण यत्कर्म कुरुते द्विजः।
स्नानं दानं जपो होमं तत्सर्वं विफलं भवेत् ॥
(प्राणतोषिणी)

अर्थात् नीला या लाल वस्त्र पहन कर जो कर्म स्नान, दान, जप होम आदिको द्विज करते हैं वह सब निष्फल हो जाता है। चूंकि संन्यासी होमादि सबको त्याग देता है अतः वह रक्त वर्णके ही एक भेद विशेष काषाय वर्णके वस्त्रोंको धारण कर इन कर्मोंके प्रति अपनी अकर्तव्यताको विज्ञापित करता है जिससे यज्ञादि कर्मोंके प्रति उसकी असमर्थता एवं निष्फलताका ज्ञान अन्योंको भी होता रहे और वे उसे यज्ञादि कर्म करानेमें लिप्त न कर सकें। परन्तु काम्य कर्मोंमें कामनानुकूल दैनिक कार्यमें निषिद्ध वर्णके वस्त्रोंका भी उपयोग करना होता है। अतः जहां ऊपर लाल वस्त्रका सात्विकता शान्ति आदिकी दृष्टिसे निषेध प्रदर्शित किया था वहां अब राजसिक एवं तामसिक भावनाके काम्य कर्मोंमें उसकी उपयोगिता "वश्ये रक्तं" के द्वारा प्रकट की गई है।

वेदमें वर्ण विज्ञान

रंगीन परिधानका शरीरकी प्रकृति पर प्रभाव पडता है, इसका संकेत यजुर्वेदके अध्याय २४ में विशद रूपसे वर्णित है। वहां भिन्न प्रकारके रंगोंके पशुपक्षियोंके रंगोंके कारण ही उनमें भिन्न तत्वों एवं गुणोंकी प्रधानताका प्रतिपादन किया गया है। जिससे ज्ञात है कि उनमें तत्तत् तत्वोंकी एवं गुणोंकी प्रधानता उनके विशिष्ट वर्णोंके ही कारण है। यथा- (यजु. अ. श २४ मं. १ में)

(१) कृष्णग्रीवा आग्नेयः = काली ग्रीवावाले पशु अग्नि तत्व प्रधान है।

(२) सोमापौष्णः श्यामोनाभ्याम् = काली नाभिवालोंमें सोम और पूषा तत्व प्रधान हैं।

(३) सौर्ययामौ श्वेताश्च कृष्णाश्च पार्श्वयो := श्वेत और काली पसलियों सदृश धारीवालोंमें सूर्य और यम तत्व प्रधान है।

(४) वायव्यः श्वेतः = श्वेत रंगके वायुतत्व प्रधान पशु हैं।

मन्त्र २ में—

(५) रोहितो धूम्ररोहितः कर्कन्धुरोहितस्ते सौम्या := लाल या कपिल वर्ण वाले पशु सोमशक्तिसे सम्पन्न है।

(६) बभ्रुरुणबभ्रु शुकबभ्रुस्ते वारुणा := भूरे या लाल मिश्रित भूरे हरितवर्णके साथ भूरे वर्णवाले वरुण तत्व प्रधान है।

मन्त्र १९ में—

(७) श्वेता : सौर्याः - श्वेत सूर्यतत्व वाले हैं।

अर्थात् विविध वर्णोंके परिधानोंका अपने शरीर, प्रकृति, मन, बुद्धि, विविध प्रकारकी भावना एवं प्रवृत्तियों पर प्रभाव पडता है। जब वर्ण विशेषका प्रभाव पडता है तो उस वर्णके विपरीत या प्रतिकूल प्रभावकी उत्पत्तिका अभाव या शमन भी होता है यह भी परिणामतः ज्ञात हो जाता है। जिस प्रकारसे बाह्य वर्णके आवरणका प्रभाव अपने मन पर पडा है, ठीक उसी प्रकार हमारी आन्तरिक अग्नि, तेज एवं मनकी वृत्तियां जब हमारे वर्णात्मक परिधानसे विश्वके मानसिक क्षेत्रमें प्रवेश करती हैं तो उसका भी प्रभाव बाह्य जगत् या अन्य व्यक्तियों पर पडता है। वर्ण (रंग) का सम्बन्ध रूपसे है। रूपका सम्बन्ध अग्निसे है। इस प्रकार वर्णके रूपके माध्यमसे एक अग्निका दूसरी अग्निमें वर्ण-रंजन रूपसे प्रभाव होता है। वर्ण-शब्दमें भी वर्ण-रंग है। उसको अपनेमेंसे प्रसारित करनेके लिये विशेष रूपसे रंजित करनेके लिये शरीर पर विशिष्ट वर्णके वस्त्र धारण किये जाते हैं उनका भी प्रभाव उन पर होता है। अतः यज्ञमें वस्त्रोंके वर्णका भी अपना पृथक् महत्त्व है।